बाल नाटक शृंखला

अंधेर नगरी

भारतेंदु हरिश्चंद्र

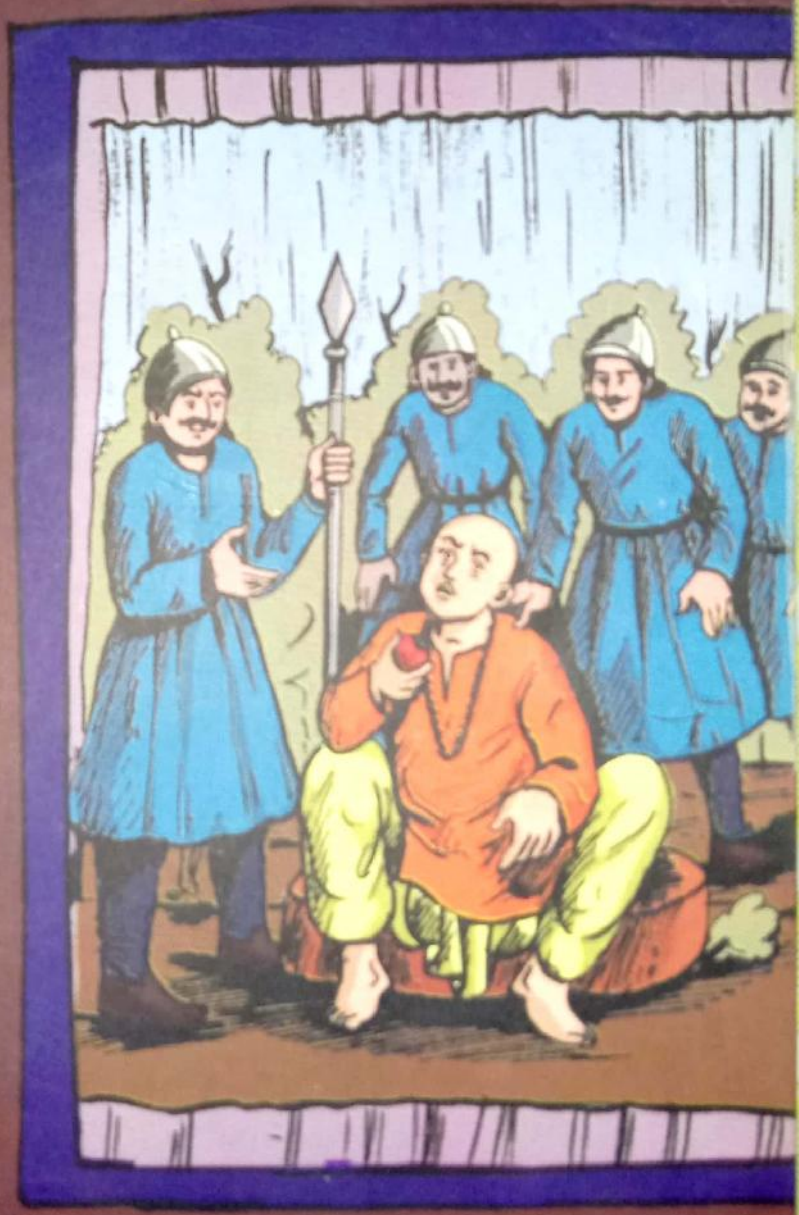

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

बाल नाटक शृंखला

अंधेर नगरी

भारतेंदु हरिश्चंद्र

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

नव जनवाचन आंदोलन

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने
'सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट' के सहयोग से किया है।
इस आंदोलन का मकसद आम जनता में
पठन-पाठन संस्कृति विकसित करना है।

अंधेर नगरी *भारतेंदु हरिश्चंद्र*	**Andher Nagari** ***Bhartendu Harishchandra***
कॉपी संपादक राधेश्याम मंगोलपुरी	*Copy Editor* Radheshyam Mangolpuri
रेखांकन महेश मंगलम	*Illustration* Mahesh Mangalam
ग्राफिक्स अभय कुमार झा	*Graphics* Abhay Kumar Jha
कवर डिजाइन व लेआउट गॉडफ्रे दास	*Cover Design & Layout* Godfrey Das
प्रथम संस्करण अगस्त 2007	*First Edition* August 2007
सहयोग राशि 12 रुपये	*Contributory Price* Rs. 12.00
मुद्रण अभिनव प्रिंटस दिल्ली - 110 034	*Printing* Abhinav Prints Delhi - 110 034

Publication and Distribution

Bharat Gyan Vigyan Samiti

Basement of Y.W.A. Hostel No. II, G-Block, Saket , New Delhi - 110017
Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773
Email : bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com

BGVS AUG 2007 2K 1200 NJVA 00036/2007

अंधेर नगरी

पात्र

महंत

नारायणदास (शिष्य)

गोवर्धनदास (शिष्य)

कुंजड़िन

हलवाई

राजा, फरियादी, कल्लू बनिया, कारीगर, चूनेवाला, भिश्ती, कसाई, गड़रिया, कोतवाल, दो सिपाही।

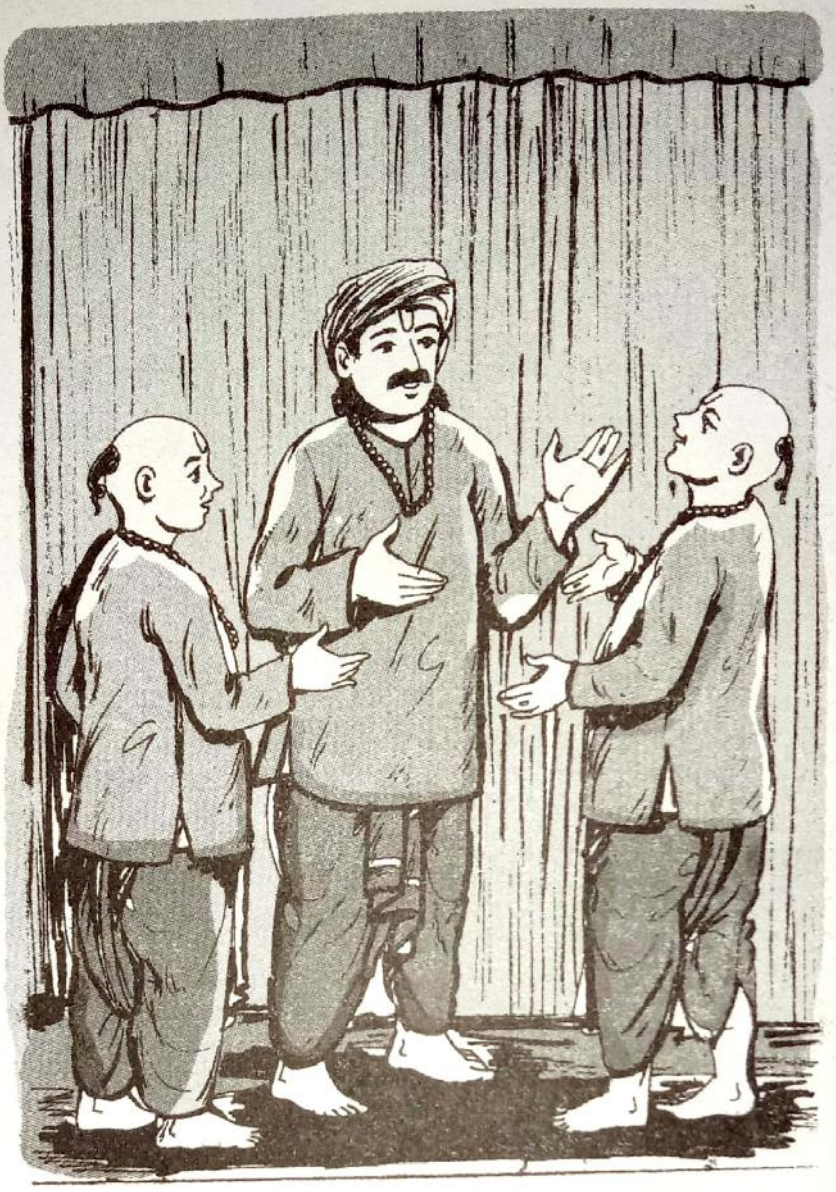

[स्थान– शहर से बाहर सड़क]

(महंतजी और दो चेले बातें कर रहे हैं।)

महंत : बच्चा नारायणदास, यह नगर तो दूर से बड़ा सुंदर दिखाई पड़ता है। देख, कुछ भिक्षा मिले तो भगवान को भोग लगे। और क्या?

नारायणदास : गुरुजी महाराज, नगर तो बहुत ही सुंदर है,

पर भिक्षा भी सुंदर मिले तो बड़ा आनंद हो।

महंत : बच्चा गोवर्धनदास, तू पश्चिम की ओर जा और नारायणदास पूर्व की ओर जाएगा।

(गोवर्धनदास जाता है।)

गोवर्धनदास : *(कुंजड़िन से)* क्यों, भाजी क्या भाव?

कुंजड़िन : बाबाजी, सब टके सेर।

गोवर्धनदास : सब भाजी टके सेर! वाह! वाह! बड़ा आनंद है। यहां सभी चीजें टके सेर।

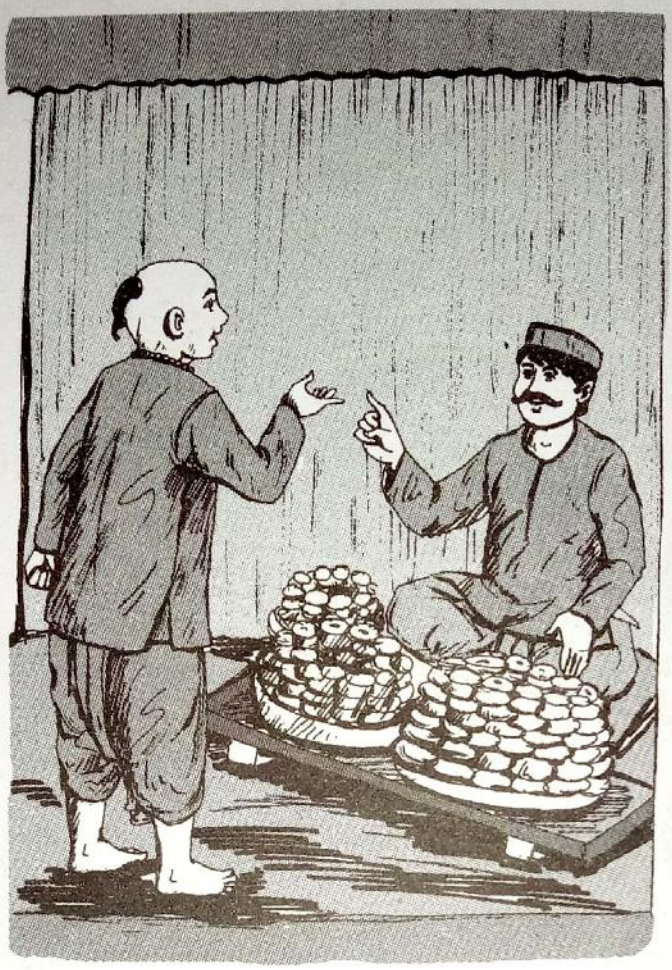

गोवर्धनदास : *(हलवाई के पास जाकर)* क्यों भाई हलवाई, मिठाई क्या भाव?

हलवाई : सब टके सेर।

गोवर्धनदास : वाह! वाह! बड़ा आनंद है। सब टके सेर? क्यों बच्चा, इस नगरी का नाम क्या है?

हलवाई : अंधेर नगरी।

गोवर्धनदास : और राजा का नाम क्या है?

हलवाई : चौपट राजा।

गोवर्धनदास : वाह! वाह!

अंधेर नगरी चौपट राजा,

टके सेर भाजी टके सेर खाजा।

हलवाई : तो बाबाजी, कुछ लेना हो तो ले लें।

गोवर्धनदास : बच्चा, भिक्षा मांगकर सात पैसे लाया हूं,
साढ़े तीन सेर मिठाई दे दे।

*(महंत जी और नारायणदास एक ओर से आते हैं
और दूसरी ओर से गोवर्धनदास आता है।)*

महंत : बच्चा गोवर्धनदास, कह, क्या भिक्षा लाया?
गठरी तो भारी मालूम पड़ती है।

गोवर्धनदास : गुरुजी महाराज, सात पैसे भीख में मिले थे। उसी से साढ़े तीन सेर मिठाई मोल ली है।

महंत : बच्चा, नारायणदास ने मुझसे कहा था कि यहां सब चीजें टके सेर मिलती है, तो मैंने इसकी बात का विश्वास नहीं किया। बच्चा, यह कौन-सी नगरी है और इसका

कौन-सा राजा है, जहां टके सेर भाजी और टके सेर खाजा मिलता है?

गोवर्धनदास : अंधेर नगरी चौपट राजा,

टके सेर भाजी टके सेर खाजा।

महंत : तो बच्चा, ऐसी नगरी में रहना उचित नहीं है, जहां टके सेर भाजी और टके सेर खाजा बिकता है। मैं तो इस नगर में अब एक क्षण भर भी नहीं रहूंगा। देख, मेरी बात मान, नहीं तो पीछे पछताएगा। मैं तो जाता हूं, पर इतना कहे जाता हूं कि कभी संकट पड़े तो याद करना।

(राजा, मंत्री और नौकर लोग यथास्थान बैठे हैं। पर्दे के पीछे 'दुहाई है' का शब्द होता है।)

राजा : कौन चिल्लाता है। उसे बुलाओ तो।

(दो नौकर एक फरियादी को लाते हैं।)

फरियादी : दुहाई, महाराज, दुहाई!

राजा : बोलो, क्या हुआ?

फरियादी : महाराज, कल्लू बनिए की दीवार गिर पड़ी, सो मेरी बकरी उसके नीचे दब गई। न्याय हो।

राजा : अच्छा, कल्लू बनिए को पकड़ लाओ।

(नौकर दौड़कर बाहर से बनिए को पकड़ लाते हैं।)

राजा : क्यों रे बनिए, इसकी बकरी क्यों दबकर मर गई?

कल्लू : महाराज, मेरा कुछ दोष नहीं। कारीगर ने ऐसी दीवार बनाई कि गिर पड़ी।

राजा : अच्छा, कल्लू को छोड़ दो, कारीगर को पकड़ लाओ।

(कल्लू जाता है। लोग कारीगर को पकड़कर लाते हैं।)

चूने वाला : महाराज, भिश्ती ने चूने में पानी ज्यादा डाल दिया, इसी से चूना कमजोर हो गया।

राजा : तो भिश्ती को पकड़ो।

(भिश्ती लाया जाता है।)

राजा : क्यों रे भिश्ती, इतना पानी क्यों डाल दिया कि दीवार गिर पड़ी और बकरी दब गई?

भिश्ती : महाराज, गुलाम का कोई कसूर नहीं, कसाई ने मसक इतनी बड़ी बना दी थी कि उसमें पानी ज्यादा आ गया।

राजा : अच्छा, कसाई को लाओ, भिश्ती को निकालो।

(लोग भिश्ती को निकालते हैं। कसाई को लाते हैं।)

राजा : क्यों रे कसाई, तूने ऐसी मसक क्यों बनाई?

कसाई : महाराज, गड़रिए ने टके की ऐसी बड़ी भेड़ मेरे हाथ बेची कि मसक बड़ी बन गई।

राजा : अच्छा, कसाई को निकालो, गड़रिए को लाओ।

(कसाई निकाला जाता है। गड़रिया लाया जाता है।)

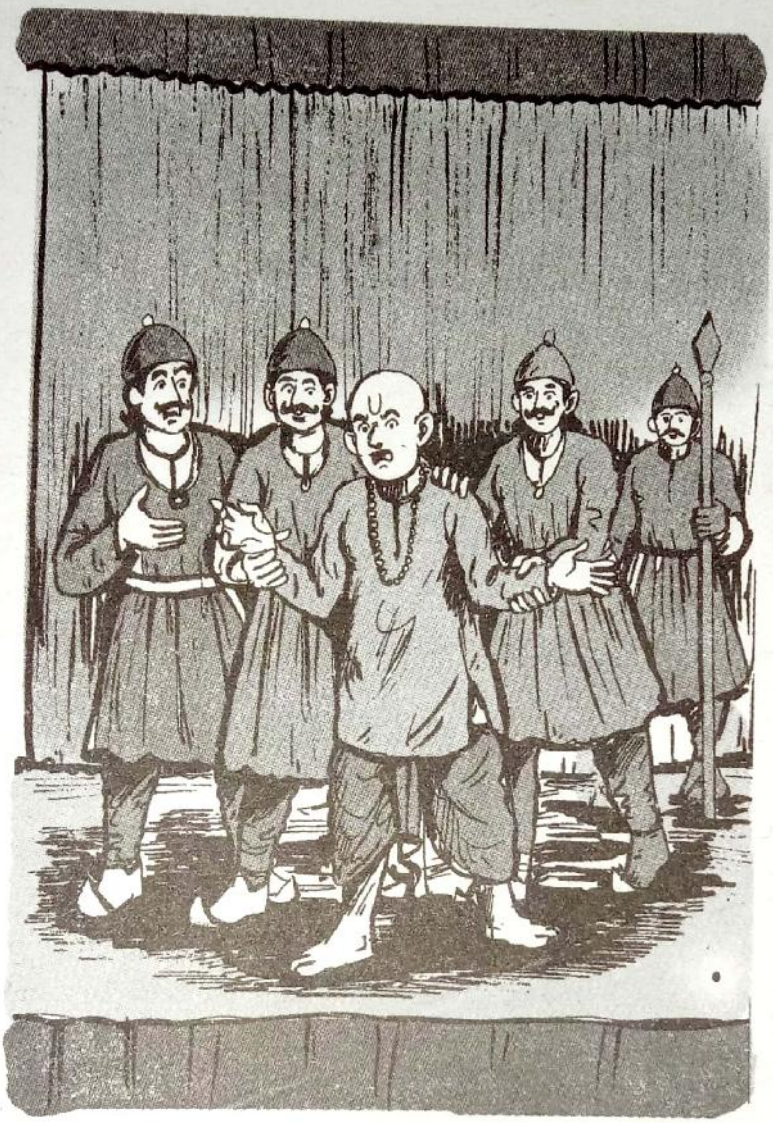

राजा : क्यों रे गड़रिए, ऐसी बड़ी भेड़ क्यों बेची?

गड़रिया : महाराज, उधर से कोतवाल की सवारी आई, उसकी भीड़-भाड़ के कारण मैंने छोटी-बड़ी भेड़ का ख्याल ही नहीं किया, मेरा कुछ कसूर नहीं।

राजा : इसको निकालो, कोतवाल को पकड़कर लाओ।

(कोतवाल को पकड़कर लाया जाता है।)

राजा : क्यों रे कोतवाल, तूने सवारी घूमने क्यों निकाली कि गड़रिए ने घबराकर बड़ी भेड़ बेच दी?

कोतवाल : महाराज, मैंने कोई कसूर नहीं किया।

राजा : कुछ नहीं महाराज, महाराज। ले जाओ, कोतवाल को अभी फांसी दे दो।

(सभी कोतवाल को पकड़कर ले जाते हैं।)

[स्थान– जंगल]

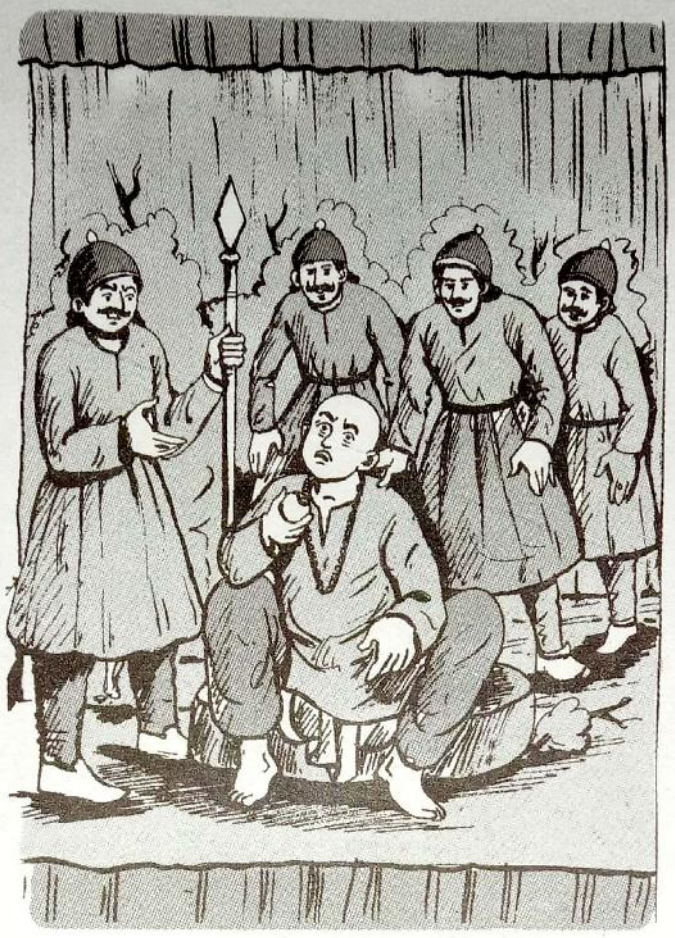

(गोवर्धनदास बैठा मिठाई खा रहा है।)

गोवर्धनदास : गुरुजी ने हमको नाहक यहां रहने को मना किया था। माना कि देश बहुत बुरा है, पर अपना क्या?

(चार सिपाही चार ओर से आकर उसको पकड़ लेते हैं।)

सिपाही – 1 : चल बे चल, मिठाई खाकर खूब मोटा हो गया है। आज मजा मिलेगा।

गोवर्धनदास : *(घबड़ाकर)* हैं, यह आफत कहां से आई? अरे भाई, मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, जो मुझे पकड़ते हो?

सिपाही – 2 : आप बड़े मोटे हैं, इसलिए फांसी लगेगी।

गोवर्धनदास : मोटा होने पर फांसी! यह कहां का न्याय है? अरे, फकीरों से मजाक नहीं किया जाता।

सिपाही – 2 : जब सूली पर चढ़ जाओगे तब मालूम होगा कि फांसी है या मजाक। सीधी तरह चलते हो या घसीटकर ले चलें?

गोवर्धनदास : तब भी बाबा बात क्या है कि एक फकीर आदमी को नाहक फांसी देते हो?

सिपाही – 1 : बात यह है कि कल कोतवाल को फांसी का हुक्म हुआ था। जब फांसी देने को उसे ले गए तो फांसी का फंदा बड़ा निकला, क्योंकि कोतवाल साहब दुबले हैं। हम लोगों ने महाराज से अर्ज की। इस पर हुक्म हुआ कि किसी मोटे आदमी को फांसी दे दो, क्योंकि बकरी मरने के अपराध में किसी न किसी को सजा होना जरूरी है, नहीं तो न्याय न होगा।

गोवर्धनदास : दुहाई परमेश्वर की! अरे मैं नाहक मारा जाता हूं। अरे, यहां बड़ा ही अंधेर है! अरे, गुरुजी महाराज का कहा मैंने न माना, उसका फल मुझे भोगना पड़ा। गुरुजी, तुम कहां हो? आओ, मेरे प्राण बचाओ! अरे, मैं बे – अपराध मारा जाता हूं! गुरुजी! गुरुजी!

(गोवर्धनदास चिल्लाता है,
सिपाही उसे पकड़कर ले जाते हैं।)

गोवर्धनदास : हाय बाप रे! मुझे बेकसूर ही फांसी देते हैं। अरे भाइयो, कुछ तो धर्म का ख्याल करो। अरे मुझे छोड़ दो। हाय! हाय!

सिपाही–1 : अबे, चुप रह, राजा का हुक्म भला कहीं टल सकता है? यह तेरा आखिरी दम है, राम का नाम ले, बेफायदा क्यों शोर करता है?

गोवर्धनदास : हाय, मैंने गुरुजी का कहना न माना, उसी का यह फल है। गुरुजी, कहां हो? बचाओ, गुरुजी! गुरुजी!

महंत : अरे बच्चा गोवर्धनदास, तेरी यह क्या दशा है?

गोवर्धनदास : *(गुरुजी को हाथ जोड़कर)* गुरुजी, दीवार के नीचे बकरी दब गई, जिसके लिए मुझे फांसी दी जा रही है। गुरुजी, बचाओ?

महंत : कोई चिंता नहीं, नारायण सब समर्थ हैं। *(भौंह चढ़ाकर सिपाहियों से)* सुनो, मुझे शिष्य को अंतिम उपदेश देने दो। तुम लोग जरा किनारे हो जाओ। देखो, मेरा कहना न मानोगे तो तुम्हारा भला न होगा।

सिपाही : नहीं महाराज, हम लोग हट जाते हैं। आप बेशक उपदेश दीजिए। *(सिपाही हट जाते हैं, गुरुजी चेले को कान में समझाते हैं।)*

गोवर्धनदास : तब तो गुरुजी, हम अभी फांसी चढ़ेंगे।

महंत : नहीं बच्चा, हम बूढ़े हुए, हमको चढ़ने दे।

गोवर्धनदास : स्वर्ग जाने में बूढ़ा-जवान क्या? आप तो सिद्ध हैं। आपको गति-अगति से क्या? मैं फांसी चढ़ूंगा।

(इस प्रकार दोनों हुज्जत करते हैं। सिपाही लोग परस्पर चकित होते हैं। राजा, मंत्री और कोतवाल आते हैं।)

राजा : यह क्या गोल-माल है?

सिपाही : महाराज, चेला कहता है– मैं फांसी चढ़ूंगा; गुरु कहता है– मैं चढ़ूंगा। कुछ मालूम नहीं पड़ता कि क्या बात है?

राजा : *(गुरुजी से)* बाबाजी, बोलो। आप फांसी क्यों चढ़ना चाहते हैं?

महंत : राजा, इस समय ऐसा शुभ घड़ी है कि जो मरेगा, सीधा स्वर्ग जाएगा।

मंत्री : तब तो हमीं फांसी चढ़ेंगे।

गोवर्धनदास : नहीं, हम। हमको हुक्म है।

कोतवाल : हम लटकेंगे, हमारे सबब से तो दीवार गिरी।

राजा : चुप रहो सब लोग। राजा के जीते जी और कौन स्वर्ग जा सकता है? हमको फांसी चढ़ाओ, जल्दी-जल्दी।

(राजा को लोग फांसी पर लटका देते हैं।)

[पर्दा गिरता है।]

❐

1881

राजा : क्यों रे कारीगर, इसकी बकरी कैसे मर गई?

कारीगर : महाराज, चूने वाले ने चूना ऐसा खराब बनाया कि दीवार गिर पड़ी।

राजा : अच्छा, उस चूने वाले को बुलाओ।

(कारीगर निकाला जाता है।
चूने वाला पकड़कर लाया जाता है।)

राजा : क्यों रे चूने वाले, इसकी बकरी कैसे मर गई?

नव जनवाचन आंदोलन

वह नगरी ऐसी थी जहां सब कुछ टके सेर मिलता था– टके सेर भाजी, टके सेर खाजा। राजा के शब्द ही कानून थे– वह जिसे चाहे दंड दे, जिसे चाहे छोड़ दे। अक्सर ऐसा होता कि गलती कोई और करता तथा सजा किसी और को मिलती। और एक दिन तो गजब हो गया– मुजरिम की जगह राजा ने खुद ही फांसी का फंदा अपने गले में डाल लिया।

भारत ज्ञान विज्ञान समिति